Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 GISRRJ | Volume 1 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

क्षणिकवाद एवं खेमाथेरी-मार संवाद

इन्दु डिमोलिया,
शोधच्छात्रा,
संस्कृत एवं प्राच्यविद्या अध्ययन संस्थान,
जे.एन.यू, दिल्ली, भारत।

सारांश – थेरीगाथा की थेरियों की गाथाओं में बौद्ध दार्शनिक तत्त्व दिखाई देते हैं। थेरीगाथा की थेरियाँ किसी अन्य से न लड़कर, स्वयं के मनोविकारों से ही लड़ती हैं। आज के समय में इस बात का बहुत बड़ा महत्व है, वर्तमान समाज में जहाँ एक-दूसरे पर दोषारोपण कर स्वयं को सही ठहराने की होड़ मची हुई है, वही थेरीगाथा की थेरियाँ स्वयं के मनोविकारों से लड़ने के लिए कहती हैं।

मुख्यशब्द – क्षणिकवाद, खेमाथेरी-मार, संवाद, बौद्ध, दार्शनिक, संस्कृत साहित्य।

भारतीय संस्कृत साहित्य में यम-यमी, विश्वामित्र- नदी, सरमा-पणि, अगस्त्य-लोपामुद्रा, पुरूरवा-उर्वशी इत्यादि संवाद-सूक्तों के माध्यम से विशाल संवाद-परम्परा का इतिहास देखने को मिलता है। बौद्ध धर्म में भी हम उस समय में हुए बौद्ध सम्मेलनों को संवाद-परम्परा के रूप में देख सकते हैं। उन सम्मेलनों में सभी को समान रूप से बोलने का अवसर दिया जाता था। आचार्य शंकर एवं विवेकानन्द भी इसी संवाद-परम्परा का उदाहरण थे। संवाद का अर्थ है 'किसी से की जाने वाली बातचीत या वार्तालाप'। बातचीत का संतुलन उसे संवाद की संज्ञा देता है। संवाद के प्रस्तुतीकरण के आधार पर तीन भेद होते हैं- अश्राव्य, श्राव्य एवं अप्रत्यक्ष संवाद।

अश्राव्य संवाद :- जो दूसरों के सुनने के लिए न हो, इसी को स्वगत या आत्मगत कथन कहते हैं। **श्राव्य संवाद** :- जिन संवादों का प्रस्तुतीकरण सबके सुनने के लिए होता है, उन्हें श्राव्य की संज्ञा दी गई है। इसे सर्वश्राव्य भी कहा गया है।

अप्रत्यक्ष (कल्पित संवाद) :- तीसरे प्रकार का यह संवाद अप्रत्यक्ष रूप से कल्पना के द्वारा अदृश्य से संवाद का आना या किसी पात्र का अप्रत्यक्ष से बात करना है। इस संवाद में 'आकाश की ओर मुँह उठाकर किसी कल्पित व्यक्ति से बात करता हुआ' दिखाया जाता है। कुछ विद्वान् इसे आत्मसंवाद का ही एक रूप मानते हैं।

'दर्शन' शब्द 'दृश्' धातु से 'ल्युट्' प्रत्यय करके निष्पन्न होता है। 'दृश्यतेऽनेन इति दर्शनम्' अर्थात् आत्मसाक्षात्कार करने का हेतु या साधन दर्शन है। विश्व कहाँ से उद्भूत हुआ और कहाँ विलीन होगा, हम कौन हैं, कहाँ से आए हैं और अन्त में कहाँ जायेंगे, इस प्रकार तत्त्वपरक विचारणा दर्शन का विषय है। दर्शन को दो भागों में बाँटा गया है- आस्तिक और नास्तिक दर्शन। आस्तिक दर्शन में 'षड् दर्शन' अर्थात् न्याय, वैशेषिक, साङ्ख्य, योग, पूर्वमीमांसा या मीमांसा, उत्तरमीमांसा या वेदान्त आते हैं। नास्तिक दर्शन में चार्वाक, बौद्ध और जैन दर्शन तीन भागों में विभाजित किया गया है।

बौद्ध धर्म के प्रवर्तक गौतम बुद्ध ने दु:खों का कारण समझने तथा उन दु:खों को दूर करने का उपाय जानने के लिये वर्षों तक अध्ययन, तप और चिन्तन करके बोधि या ज्ञान प्राप्त किया। इस ज्ञान का सार उनके चार आर्य-सत्यों में मिलता है। चार आर्य-सत्य हैं- (1) दु:ख है, (2) दु:ख का कारण है, (3) दु:ख का अन्त है, (4) दु:ख को दूर करने का उपाय है। चतुर्थ आर्य सत्य को 'आष्टांगिक मार्ग' कहते हैं। इसमें दु:ख दूर करने के उपाय के रूप में आठ साधन बतलाये गये हैं। वे हैं- (1) सम्यक् दृष्टि, (2) सम्यक् संकल्प, (3) सम्यक् वाक्, (4) सम्यक् कर्मान्त, (5) सम्यक् आजीव, (6) सम्यक् व्यायाम, (7) सम्यक् स्मृति, (8) सम्यक् समाधि। इन आठ साधनों से मनुष्य की अविद्या और तृष्णा नष्ट हो जाती है। दु:ख का पूर्ण विनाश हो जाने से पुनर्जन्म की सम्भावना भी समाप्त हो जाती है। ऐसी अवस्था को बौद्ध दर्शन में 'निर्वाण' नाम दिया गया है।

थेरीगाथा पालि त्रिपिटक-साहित्य में सुत्तपिटक के खुद्दकनिकाय का एक ग्रंथ है, जो 16 'निपातों' अर्थात् वर्गों में विभाजित है। इसमें 522 गाथाओं के माध्यम से 73 भिक्खुणियों ने अपने अनुभव को संगीतात्मक तथा आत्माभिव्यञ्जनात्मक गीति शैली में अभिव्यक्त किया है।, जो कि गाथाओं की संख्या के अनुसार क्रमबद्ध हैं।

बौद्ध दर्शन के मौलिक सिद्धान्त प्रतीत्यसमुत्पाद, अनित्यवाद[1], क्षणिकवाद, अनात्मवाद[2] एवं निर्वाण[3] हैं। थेरीगाथा की थेरियों ने भी अपनी गाथाओं में बौद्ध दर्शन के इन मौलिक सिद्धान्तों का वर्णन किया है। **उदाहरण के रुप में** अञ्ञतराथेरी (एक अज्ञातनामा भिक्खुणी) की गाथा में अनित्यता के सिद्धांत को हम देख सकते हैं-

अञ्ञतराथेरी (एक अज्ञातनामा भिक्खुणी)[4] एक दिन रसोईघर में खाना पका रही थी। सहसा आग अधिक जल जाने से कढ़ाई में पक रहा शाक जल गया। इस घटना से उसे संसार की सारी वस्तुओं

[1] सर्वमनित्यम्, बौद्ध दर्शन-मीमांसा, पृ. 4

[2] सर्वमनात्मम्, बौद्ध दर्शन-मीमांसा, पृ.4

[3] निर्वाणं शान्तम्, बौद्ध दर्शन-मीमांसा, पृ.4

[4] थेरीगाथा, डॉ. विमलकीर्ति, गाथा संख्या 1, पहला वर्ग, पृ. 31

की अनित्यता का गम्भीर ज्ञान उत्पन्न हुआ उसने बहुमूल्य वस्त्र और गहने पहनने छोड़ दिए। शास्ता ने उसकी महान् वैराग्य-वृत्ति को देख कर भिक्खुणी से कहा था-

"हे स्थविरिके ! तू सुख की नींद सो। अपने ही हाथों से बनाये वस्त्र को ओढ़कर, तू (इसी जीवन में) परम शान्ति को प्राप्त कर, क्योंकि कढ़ाई में पड़े हुए जले शाक की तरह, तेरा राग (जल कर) शान्त हो गया।[5]

जगत् में जीवन एवं वस्तुओं को अनित्य बताकर बुद्ध यह कहना चाहते थे कि हमें इनके प्रति राग-मोह आदि नहीं रखना चाहिए और जब राग-मोह आदि ही नहीं होगा तो इनके नष्ट होने पर किसी तरह का दु:ख भी नहीं होगा। अत: दु:ख के निरोध के लिए वस्तुओं के वास्तविक गुण अर्थात् अनित्यता को जानना आवश्यक है।

इसी प्रकार हम खेमाथेरी-मार संवाद में क्षणिकवाद के सिद्धान्त को देख सकते हैं -

क्षणिकवाद (क्षणभंगुरता) एवं खेमाथेरी-मार[6] संवाद :-

बुद्ध के अनित्यवाद के सिद्धान्त को उनके अनुयायियों ने क्षणिकवाद में परिवर्तित किया। क्षणिकवाद अनित्यता का ही विकसित रुप है। क्षणिकवाद के अनुसार प्रत्येक वस्तु का अस्तित्व क्षणमात्र के लिए ही रहता है। क्षणिकवाद के अनुसार विश्व की प्रत्येक वस्तु सिर्फ अनित्य ही नहीं, बल्कि क्षणभंगुर भी है। जिस प्रकार नदी की एक बूँद एक क्षण के लिए सामने आती है, दूसरे क्षण वह विलीन हो जाती है, उसी प्रकार जगत् की समस्त वस्तुएँ क्षणमात्र के लिये ही अपना अस्तित्व कायम रखती हैं।

थेरीगाथा के खेमाथेरी-मार संवाद में क्षणभंगुरता का वर्णन आया है-

खेमाथेरी सागल (स्यालकोट) की राज-कन्या थी। अतीव सुंदरी और स्वर्णवर्णा। मगध-राज बिंबिसार से विवाह हुआ। शास्ता एक दिन वेणुवन आए। सारा राज-परिवार उनके दर्शन के लिए गया। किंतु रूपगर्विता खेमा नहीं गई, क्योंकि वह जानती थी कि भगवान् बुद्ध रूप-सौन्दर्य की तुच्छता और विपरिणामता दिखाते हैं। किसी प्रकार राजा के आग्रह से वह उद्यान की शोभा दिखाने के बहाने वहाँ ले जायी गई। अकस्मात् भगवान् बुद्ध के दर्शन भी वहाँ उसे हो गए। शास्ता ने उसे रूप-गर्व की निस्सारता दिखाने के लिए अपने अलौकिक योग-बल से एक अप्सरा को पैदा किया। अप्सरा भगवान् को पंखा झल रही थी। उसे देखकर खेमा ने अपने मन में सोचा, "इस प्रकार की अप्सराएँ और देव-रमणियाँ भगवान् को घेरे रहती हैं, मैं तो इनकी दासी होने के भी योग्य नहीं। मेरे रूप-अभिमान ने तो मुझे नष्ट कर दिया।" वह उस अप्सरा की रूप-सम्पदा को एकटक देखती खड़ी रही। भगवान् के योग-बल से वह अप्सरा प्रथम वयस् से मध्यम वयस् में परिणत हुई और फिर बाद में बुड्ढी दिखाई देने लगी-पोपले मुख वाली,

---

[5] थेरीगाथा, डॉ. विमलकीर्ति, गाथा संख्या 1, श्लोक संख्या 1

[6] थेरीगाथा, डॉ. विमलकीर्ति, गाथा संख्या 52, छठा वर्ग

कांतिहीन, पके बाल वाली, क्षीण, दुर्बल ! पंखा भी उसके हाथ से गिर पड़ा और उसके साथ ही वह पृथ्वी पर गिर पड़ी। खेमा जो यह सब दृश्य देख रही थी, सोचने लगी, "हाय ! सौन्दर्य का यही परिणाम है? मेरी भी देह का यही परिणाम होगा?" भगवान् ने ठीक समय जानकर उसे उपदेश दिया। उपदेश के अनन्तर ही उसे ज्ञान की प्राप्ति हो गई। बाद में प्रव्रजित होकर खेमा भगवान् बुद्ध की सबसे बड़ी प्रज्ञावती भिक्षुणी हुई।

एक दिन खेमा वृक्ष के नीचे आसन मारे ध्यान में लीन थी, उसी समय मार ने एक युवा पुरूष के रूप में आकर उसे लुभाने की चेष्टा की। उन दोनों का संवाद और किस प्रकार खेमा ने अपनी अद्‌भुत ज्ञान-साधना से उस पर विजय प्राप्त की, खेमा इन पंक्तियों को हमारे लिए छोड़ गई हैं-

"दहरा त्वं रूपवती, अहं पि दहरो युवा।

पञ्चाङ्गिकेन तुरियेन, एहि खेमे रमामसे"ति॥"[7]

"खेमा ! तू रूपवती युवती है, मैं भी रूपवान् युवक हूँ। आ खेमा ! पाँच अंगों से युक्त तूर्य ध्वनि (वाद्य संगीत) के साथ हम यहाँ विषय-सुख का आनंद लें।"

"इमिना पूतिकायेन, आतुरेन पभङ्गुना।

अट्टियामि हरायामि, कामतण्हा समूहता॥"[8]

"इस गन्दे, घृणित, व्याधि के घर, हड्डी-मांस के क्षणभंगुर शरीर से विषय-सुख अनुभव करने में मुझे घृणा आती है, मैं लज्जा अनुभव करती हूँ; मैंने काम-तृष्णा की जड़ को काट दिया है।"

"सत्तिसूलूपमा कामा, खन्धासं अधिकुट्टना।

यं त्वं कामरतिं ब्रूसि, अरती दानि सा मम॥"[9]

देख, यह काम-तृष्णा भाले के समान बींधने वाली है; ये स्कंध-समूह छुरी के समान काटने वाले हैं; जिसे तू भोग का आनन्द कहता है, वही मेरे लिए घृणा का उत्पादक है।

"सब्बत्थ विहता नन्दी, तमोखन्धो पदालितो।

एवं जानाहि पापिम, निहतो त्वमसि अन्तक॥"[10]

इस प्रकार की भोग-तृष्णा का मैंने विनाश कर दिया है, अंधकार-पुंज हटा दिया है। पापी मार ! प्राणियों का अन्त करने वाले ! समझ ले, आज तू पराजित कर दिया गया ! तेरा ही अंत कर दिया गया।

---

[7] थेरीगाथा, भरत सिंह उपाध्याय, पृ० 48-49

[8] थेरीगाथा, भरत सिंह उपाध्याय, पृ० 48-49

[9] थेरीगाथा, भरत सिंह उपाध्याय, पृ० 48-49

[10] थेरीगाथा, भरत सिंह उपाध्याय, पृ० 48-50

"नक्खत्तानि नमस्सन्ता, अग्गिं परिचरं वने।

यथाभुच्चमजानन्ता, बाला सुद्धिममञ्ञव॥"[11]

"सत्य को यथार्थ रूप से न जानते हुए ही, मूढ़ जन नक्षत्रों को नमस्कार करते हैं, वनों में अग्नि-पूजा करते हैं. और इस प्रकार शुद्धि-प्राप्ति की आशा करते हैं।"

"अहं च खो नमस्सन्ती, सम्बुद्धं पुरिसुत्तमं।

पमुत्ता सब्बदुक्खेहि, सत्थुसासनकारिका"ति॥"[12]

"मैंने तो सर्वोतम पुरुष भगवान् सम्यक् संबुद्ध की पूजा की है, शास्ता के शासन को पूरा कर मैं अब सब दु:खों से विमुक्त हो गई हूँ।"

थेरीगाथा में सुन्दरीनन्दाथेरी ने **भी शरीर की क्षणभंगुरता को समझते हुए** अपनी गाथा में निर्वाण-प्राप्त कर परम शान्ति के विषय में बताया है-

कपिलवत्थु में शाक्य-राजवंश में जन्मी सुन्दरीनन्दा रूप-लावण्य से परिपूर्ण थी, इसलिए उसको सुन्दरी एवं जनपद-कल्याणी के नाम से भी जाना जाता था। शाक्य राजकुमार नन्द और राहुल के प्रव्रज्या ग्रहण करने के बाद राजा शुद्धोदनकी मृत्यु के बाद महापजापती गौतमी भी भिक्खुणी हो गई। अपने वंश के सभी लोगों को प्रव्रजित होते देख सुन्दरीनन्दा भी भिक्खुणी हो गई। उसकी यह प्रव्रज्या श्रद्धा के कारण नहीं हुई थी। वह अपने स्वजनों के प्रति प्रेम के कारण और बुद्ध के विचारों से प्रभावित होने के कारण हुई थी। फिर भी अपने सौन्दर्य में उसकी अभी तक आसक्ति बनी हुई थी। तथागत उसे अनित्यता का उपदेश देते हुए कहते हैं-

"हे नन्दा ! तू इस गन्दे सम्मिश्रण (शरीर) को देख ! तू अशुचि दुर्गन्धमय और व्याधि के समूह इस शरीर को देख। एकाग्र चित्त और अच्छी प्रकार समाधि में स्थित होकर तू अपने चित्त को अशुभ-भावना में लगा।[13] तू अपनी प्रज्ञा से सौन्दर्य के मोह से विमुक्त होकर सत्य को देख।

इस उपदेश को सुनकर थेरी नन्दा को ज्ञान की प्राप्ति हुई और वह कहती है कि "तब मुझे इस देह में वैराग्य उत्पन्न हुआ। मैं अन्दर से राग-मुक्त हो गई, मैंने इस देह से अपनापन तोड़ दिया है। पुरुषार्थ में लीन, अनासक्त, उपशान्त होकर, आज मैं निर्वाण की परमशान्ति का अनुभव करती हूँ। आज मैं निर्वाण-प्राप्त हूँ, परम शान्त हूँ।"[14]

---

[11] थेरीगाथा, भरत सिंह उपाध्याय, पृ० 48-50

[12] थेरीगाथा, भरत सिंह उपाध्याय, पृ० 48-50

[13] थेरीगाथा, डॉ. विमलकीर्ति, गाथा संख्या- 41, श्लोक-82

[14] थेरीगाथा, डॉ. विमलकीर्ति, गाथा संख्या- 44, श्लोक-86

इस प्रकार थेरीगाथा में अनेक उदाहरण देखे जा सकते हैं, जहां क्षणिकवाद सिद्धान्त को हम देखते हैं।

अत: स्पष्ट होता है कि थेरीगाथा की थेरियों की गाथाओं में बौद्ध दार्शनिक तत्त्व दिखाई देते हैं। थेरीगाथा की थेरियाँ किसी अन्य से न लड़कर, स्वयं के मनोविकारों से ही लड़ती हैं। आज के समय में इस बात का बहुत बड़ा महत्व है, वर्तमान समाज में जहाँ एक-दूसरे पर दोषारोपण कर स्वयं को सही ठहराने की होड़ मची हुई है, वही थेरीगाथा की थेरियाँ स्वयं के मनोविकारों से लड़ने के लिए कहती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची (Bibliography)

थेरीगाथा, डॉ. भरत सिंह उपाध्याय, गौतम बुक सेन्टर, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2010

थेरीगाथा, डॉ. विमलकीर्ति, सम्यक् प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, 2008

बौद्ध-दर्शन-मीमांसा, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण, 2014